उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय नैनीताल

आपराधिक प्रकीर्ण प्रार्थना पत्र सं. 1771 / 2021

अनिरूद्ध भट्ट

.....याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तराखण्ड राज्य आदि

.....उत्तरदातागण

उपस्थितिः श्री बी.डी. पाण्डेय, याचिकाकर्ता के अधिवक्ता।
श्री ललित मिगलानी, राज्य की ओर से अधिक्ता
श्री आर.पी. नौटियाल, वरिष्ठ अधिवक्ता व श्री पंकज सिंह चौहान उत्तरदाता सं. 2 व 3 के अधिक्ता
श्री अमर मूर्मि शुक्ला, उत्तरदाता सं. 4 के अधिवक्ता

निर्णय

माननीय रविन्द्र मैठानी, जे. (मौखिक),

याचिकाकर्ता ने दिनांक 23.10.2015 को पुलिस थाना मल्लीताल, जिला नैनीताल में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 341, 323 एवं 506 के अन्तर्गत प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करवायी, जिसके आधार पर मुकदमा अपराध संख्या 57 / 2015 दर्ज किया गया। पुलिस द्वारा जॉचोपरान्त न्यायालय मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट नैनीताल में उक्त मामले में आरोप पत्र दाखिल करने के बाद अपराधिक वाद सं. 2016 / 2018, राज्य बनाम अमरदीप मान आदि (संक्षेप में, '' मामाल'') संस्थित हुआ।। इस मामले में, प्रार्थना पत्र अन्तर्गत धारा 311 दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (संक्षेप में, ''संहिता'') प्रस्तुत किये गये थे, जिन्हें खारिज किया गया था। इन प्रार्थना पत्रों का इतिहास इस प्रकार है :–

(प्रथम) प्रारम्भ में, अभियोज पक्ष द्वारा संहिता की धारा 311 के तहत प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया, जो आदेश दिनांक 15.01.2020 द्वारा खारिज किया गया था।

(द्वितीय) मामले में पारित आदेश दिनांकित 15.01. 2020 के विरूद्ध राज्य की ओर से आपराधिक निगरानी सं. 21 / 2020, राज्य बनाम अमरदीप मान आदि में असफल चुनौती दी गयी।

(तृतीय) इस बीच याचिकाकर्ता ने अभियोजन पक्ष में हस्ताक्षेप की अनुमति मॉगी, जिन्होंने संहिता की धारा 302 के अन्तर्गत एक प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया। तत्पश्चात उसने एक अन्य प्रार्थना पत्र संहिता की धारा 311 के अन्तर्गत प्रस्तुत किया, जो आदेश दिनांकित 04.12.2021 से खारिज हुआ।

2. प्रारम्भ में, याचिकाकर्ता द्वारा मामले में पारित आदेश दिनांकित 04.12.2021 को निरस्त करने की मॉग की गयी, लेकिन बाद में संशोधन के माध्यम से याचिकाकर्ता ने आदेश दिनांकित 15.01.2020 एवं आदेश दिनांकित 18.02.2020 जो आपराधिक निगरानी सं. 21/ 2020, राज्य बनाम अमनदीप मान आदि में न्यायालय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश नैनीताल द्वारा पारित किया गया था, को भी निरस्त करने की मॉग की गयी।

3. पक्षगण के विद्वान अधिवक्तागण को सुना एवं अभिलेखों को अवलोकन किया।

4. विवाद को समझने के लिए थोड़े विस्तार से आवश्यक तथ्य इस प्रकार हैः–

5. याचिकाकर्ता द्वारा दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट के अनुसार, दिनांक 23.10.2015 को लगभग समय 9:30 रात्रि बजे निजी उत्तरदातागण द्वारा उस पर बेरहमी से हमला किया गया था, जिसमें उसे चोटों आईं। उसी दिन पी.डब्लू. 2 डॉ. बी.एस. दुग्ताल ने बी.डी. पाण्डेय अस्पताल, नैनीताल में उसकी चिकित्सकीय जॉच की। याचिकाकर्ता के अनुसार, दिनांक 24.10.2015 को ई.एन.टी. विशेषज्ञ द्वारा उसकी और जॉचें की गयी और उसका एक्स–रे किया गया। पी.डब्लू. 3 डॉ.आरे.के वर्मा ने एक्सरे रिपोर्ट दिनांक 27.10.2015 को दी थी। पी.डब्लू. 2 डॉ0 बी.एस.दुग्ताल का दिनांक 21.12.2016 को मामले में परीक्षण किया गया था और पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा का परीक्षण दिनांक 13.12.2017 को किया गया था। मुकदमा विचाराधीन रहने के दौरान, प्रारम्भ में राज्य ने सहिता की धारा 311 के तहत एक आवेदन किया, ताकि रेडियोलॉजिस्ट की फिर से जॉच की जा सके और यह अनुरोध किया गया था कि पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के.वर्मा द्वारा दी गयी एक्स–रे रिपोर्ट पर, जो कि प्रदर्श–क5 है, दिनांक के कॉलम में दो तिथियॉ थी अर्थात् 24.10.2015 और 27.10.2015. प्रारम्भ में, आवेदन को दिनांक 15.01.2020 को खारिज कर दिया गया था और उसके खिलाफ पुनरीक्षण भी खारिज कर दिया गया था।

6. अभियोजन साक्ष्य समाप्त होने के उपरान्त, निजी उत्तरदातागण की संहिता की धारा 313 के तहत पहले ही जॉच की जा चुकी है। यह इस स्तर पर है, याचिकाकर्ता जो सूचनादाता/ पीड़ित है, ने संहिता की धारा 311 के तहत एक और आदेवन प्रस्तुत किया। इसे भी दिनांक 04.12.2020 को खारिज कर दिया गया। ये सब आक्षेपित आरोप हैं।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा कहा गया कि पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा द्वारा तैयार की गयी एक्स–रिपोर्ट प्रदर्श–क5 में दाहिनी ओर उसके शीर्ष में दो तिथियॉ 24.02.2015 एवं 27.10.2015 है। पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के वर्मा से पूछा गया कि उनके द्वारा दी गयी एक्स–रे रिपोर्ट पर दो तिथियॉ क्यों है, लेकिन वह इसकी व्याख्या नहीं कर सके। एक्स–रे रिपोर्ट प्रदर्श–क5 के आधार पर पी. डब्लू. 2 डॉ. बी.एस.दुग्ताल द्वारा एक पूरक रिपोर्ट दी गयी थी, उनसे एक्स–रे रिपोर्ट प्रदर्श–क5 में उल्लिखित दो तिथियॉ के बारे में पूछा गया था, लेकिन वह इसकी व्याख्या नहीं कर सके, इसलिए यह तर्क दिया गया है कि दो तिथियॉ को स्पष्ट करने के लिए, जैसा कि प्रदर्श–क5 में दर्ज, याचिकाकर्ता द्वारा योजित आवेदन की अनुमति दी जानी चाहिए थी, लेनिक निम्न न्यायालय ने इस आवेदन को निरस्त करने में त्रुटि की है।

8. दूसरी ओर निजी उत्तरदातागण की ओर से पेश होने वाले विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा यह कहा गया कि संहिता की धारा 313 के आदेवन की अनुमति देना या ना देना पूरी तरह से मजिस्ट्रेट के विवेक पर है। इस तरह के आवेदनों को मामले में कमी को भरने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा बहस के दौरान निम्नलिखित तर्क भी प्रस्तुत किये गये :–

> **(प्रथम)** याचिकाकर्ता के पास इस तरह के आवेदन करने का कोई अधिस्थिति नहीं है और यह तर्क भी दिया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा सहिता की धारा 302 के तहत प्रस्तुत एक आवेदन पर निम्न न्यायालय द्वारा अभी तक निर्णय नहीं किया गया है। इसलिए, मामले में मुकदमा चलाने की अनुमति दिये बिना याचिकाकर्ता संहिता की धारा 311 के तहत इस तरह के आवेदन को योजित नहीं कर सकता था।
>
> **(द्वितीय)** पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा को दिनांक 13.12.2017 को परीक्षित कराया गया था और इसके लम्बे

समय बाद संहिता की धारा 311 के तहत आवेदन प्रस्तुत किया गया है, जिसका एक मात्र उद्देश्य सिर्फ मुकदमे को लंब खिंचना था।

(तृतीय) यहॉ तक कि याचिकाकर्ता को किसी गवाह को पुनः परीक्षत कराने की अनुमति दी गयी है, तो यह मुख्य परीक्षा की प्रकृति का हो सकता है। याचिकाकर्ता द्वारा किसी भी गवाह की परीक्षा में मुख्य प्रश्न नहीं पूछे जा सकते हैं, इसलिए कोई उद्देश्य पूरा नहीं होगा, भले ही किसी गवाह को पुनः परीक्षा के लिए बुलाये जाए।

(चतुर्थ) प्रदर्श–क5, एक्स–रे रिपोर्ट पहले ही प्रदर्शित की जा चुकी है और इसे ऐसे ही पढ़ा जाना है। तर्क के दौरान, इसकी व्याख्या की जानी चाहिए।

9. यह याचिका संहिता की धारा 482 के तहत है। यह एक ऐसा क्षेत्राधिकार है जो बहुत व्यापक है, लेकिन माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णयों की श्रेणी में दिये गये निर्देशों द्वारा निर्देशित भी है। इस क्षेत्राधिकार का मार्गदर्शन करने वाला मूल सिद्धान्त यह है कि '' जब कानून किसी को कुछ भी देता है, तो वह उन सभी चीजों को भी देता है, जिनके बिना चीजें स्वयं अनुपलब्ध होती हैं'', यह अन्तर्निहित शक्ति *एकतरफा न्यायाधीश की की प्रकृति में* है– उस वास्तविक और पर्याप्त न्यायालय करने के लिए, जिसके प्रशासन के लिए केवल यह मौजूद है या न्यायालय की आदेशिका के दुरूपयोग को रोकने के लिए है। इन अवधारणाओं को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनेश दत्त जोशी बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (2001) 8 एस.सी.सी. 570 में निम्नानुसार परिभाषित किया गया है–

> ''6. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 उच्च न्यायालय को ऐसे आदेश देने की निहित शक्तियॉ प्रदान करती हैं, जो संहिता के तहत किसी भी आदेश को प्रभावी करने के लिए या किसी भी न्यायालय की आदेशिका के दुरूपयोग को रोकने के लिए या न्यायालय के उद्देश्यों को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है। यह न्याय का सुस्थिापित सिद्धान्त है कि प्रत्येक अदालत के पास न्यायोचित कार्य करने की अन्तर्निहित शक्ति है, उस प्रशासन

के लिए वास्तविक और पर्याप्त न्याय को करने के लिए, जिसके प्रशासन के लिए अकेले यह मौजूद है या न्यायालय की आदेशिका के दुरूपयोग को रोकने के लिए। सहिता में सन्निहित सिद्धांत इस सिद्धान्त पर आधारित हैः quando lax aliquid alicui concedit, concedere videtur et id sine quo res ipsae esse non potest i.c. यानी जब कानून को किसी को कुछ भी देता है, तो वह उन सभी चिजों को भी देता है, जिसके बिना वह चीज स्वयं अनुउपलब्ध होगी। यह धारा कोई नई शक्ति प्रदान नहीं करती है, लेकिन केवल यह घोषणा करती है कि उच्च न्यायालय के पास धारा में निर्दिष्ट उद्देश्यों के लिए निहित शक्तियॉ हैं। चूँकि कभी–कभी प्रक्रियात्मक कानून में खामियॉ पायी जाती है, इसलिए इस धारा को ऐसी खामियों को कवर करने लिए शामिल किया गया है, जहॉ भी वे पाये जाते हैं। तथापि, इस धारा के अधीन उच्च न्यायालय को प्रदत्त असाधारण शक्तियॉ का उपयोग, जहॉ तक सम्भव हो, असाधारण मामलों के लिए आरक्षित करने की आवश्यकता है।''

10. आक्षेपति आदेशों द्वारा संहिता की धारा 311 के अधीन आवदेनों को अस्वीकृत किया गया है। यह धारा इस प्रकार है :–

> ''311. **आवश्यक साक्षी को समन करने या उपस्थिति व्यक्ति की परीक्षा करने की शक्ति–** कोई न्यायालय इस संहिता के अधीन किसी जॉच, विचारण या अन्य कार्यवाही के किसी प्रक्रम में किसी व्यक्ति को साक्षी के तौर पर समन कर सकता है या किसी ऐसे व्यक्ति की, जो हाजिर हो, यद्यपि वह साक्षी के रूप में समन न किया गया हो, परीक्षित कर सकता है, किसी व्यक्ति को, जिसकी पहले परीक्षा की जा चुकी हो पुनः बुला सकता है और उसकी पुनः परीक्षा कर सकता है; और यदि न्यायालय को मामले के न्यायसंगत विनिश्चय के लिए किसी ऐसे व्यक्ति का साक्ष्य आवश्यक प्रतीत होता है तो वह ऐसे व्यक्ति को समन करेगा और उसकी परीक्षा करेगा या उसे पुनः

बुलायेगा और उसकी पुनः परीक्षा करेगा।

11. संहिता की धारा 311 को पढ़ने मात्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह धारा दो भागों में है, पहला भाग विवेकाधीन है, जब अदालत किसी भी गवाह आदि को बुला कर समन कर सकती है और दूसरा भाग न्यायालय को किसी व्यक्ति की जॉच करने या वापस बुलाने या फिर से जॉच करने का आदेश देता है, यदि उसका साक्ष्य मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है।

12. याचिकाकर्ता जो चाहता है, वह यह है कि पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा का द्वारा साबित किये गये दस्तावेज में एक छोटी सी अस्पष्टता को स्पष्ट किया जा सकता है। दुर्भाग्य से यह स्पष्टीकरण नहीं मिल सका, जब पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा का बयान दिनांक 13.12.2017 को दर्ज किया गया। शायद, भारतीय साक्ष्य अधिनियम,1892 की धारा 165 के प्राविधानों को उस स्तर पर उपयोग नहीं किया जा सकता था। न्यायालय ने पी.डब्लू. 3 डॉ0. आर.के वर्मा से यह समझाने के लिए कि उनके द्वारा दिये गये दस्तावेज प्रदर्श–क5 पर दो तिथियॉ क्यों हैं, इस तरह के स्पष्टीकरण भारतीय साक्ष्य अधिनियम,1892 की धारा 165 के तहत मांगा गया होगा। यह इस प्रकार है :–

> '' 165. **प्रश्न करने या पेश करने का आदेश देने की न्यायाधीश की शक्ति–** न्यायाधीश, सुसंगत तथ्यों का पता चलाने के लिए या उसका उचित सबूत अभिप्राप्त करने के लिए, किसी भी रूप में, किसी भी समय, किसी भी साक्षी या पक्षकारों से, किसी भी सुसंगत या विसंगत तथ्य के बारे में कोई भी प्रश्न, जो वह चाहे, पूछ सकेगा, तथा किसी भी दस्तावेज या चीज को पेश करने का आदेश दे सकेगा, और न तो पक्षकार और न उसके अभिकर्ता हकदार होंगे कि वह किसी भी ऐसे प्रश्न या आदेश के प्रति आक्षेप करे, न ऐसे किसी प्रश्न के प्रत्युत्तर में दिये गये किसी भी उत्तर किसी भी साक्षी की न्यायालय की इजाजत के बिना प्रतिपरीक्षा करने के हकदार होंगे :
>
> परन्तु निर्णय को उन तथ्यों पर, जो इस अधिनियम द्वारा सुसंगत घोषित किये गये हैं और जो सम्यक् रूप से साबित किये गये हो, आधारित होना होगा :
>
> परन्तु यह भी कि न तो यह धारा न्यायाधीश को

किसी साक्षी को किसी ऐसे प्रश्न का उत्तर देने के लिए या किसी ऐसी दस्तावेज को पेश करने को विश्वस करने के लिए प्राधिकृत करेगी, जिसका उत्तर देने से या जिसे पेश करने से, यदि प्रतिपक्षी द्वारा वह प्रश्न पूछा गया होता या वह दस्तावेज मंगायी गयी होती, तो ऐसे साक्षी दोनों धाराओं को सम्मिलित करते हुए धारा 121 से 131 पर्यन्त धाराओं के अधीन इंकार करने का हकदार होता; और न न्यायाधीश कोई ऐसा प्रश्न पूछेगा, जिसका पूछना किसी अन्य व्यक्ति के लिए धारा 148 या धारा 149 के अधीन अनुचित होता; और न वह अतिस्मिन्पूर्व अपवादित दशाओं के सिवाय किसी भी दस्तावेज के प्राथमिक साक्ष्य का दिया जाना अभिमुक्त करेगा।

13. कहने की आवश्यकता नहीं है कि आपराधिक मुकदमा मूल रूप से सत्य की खोज की यात्रा है। अभियोजन या बचाव पक्ष में से किसी भी पक्ष की त्रुटियों को नहीं गिना जा सकता। न्यायालय से पास बहुत स्पष्टता के साथ सभी तथ्य होने चाहिए।

14. माननीय उच्चतम न्यायालय ने राम चन्द्र बनाम हरियाणा राज्य (1981)3एस.सी.सी.191 के मामले में न्यायाधीश की भूमिका पर विचार किया और इस प्रकार टिप्पणी की :

'' एक आपराधिक मामले की सुनवाई करने वाले न्यायाधीश की वास्तविक भूमिका क्या है? क्या उसे फुटबॉल मैंच में रेफरी की भूमिका निभानी है या क्रिकेट मैच में अंपायर की भूमिका निभानी है, कभी–कभी पोलक और मैटलैंड के रूप में जवाब देना है {पोलक और मैटलैंडः अंग्रेजी कानून का इतिहास} इस सवाल की ओर इशारा करता है, '' वह कैसे है'', या, क्या वह, लॉर्ड डेनिंग के शब्दों में, '' एक न्यायाधीश के पद को छोड़ दें और एक वकील की बागडोर धारण करें ?'' {जोन्स बनाम राष्ट्रीय कोयला बोर्ड, (1957)2 सभी ई. आर.155 (1957) 2 डब्लू..एल.आर. 760 }या क्या वह परीक्षण में एक दर्शक या प्रतिभागी होगा? क्या निष्क्रियता या गतिविधि उसके दृष्टिकोगण को चिन्हित करती है? अगर वह किसी गवाह से पूछताछ करना चाहता है, तो वह कितनी दूर

जा सकता है? क्या वह दस्तावेज पहन सकता है और उस गवाह पर ' एक नजर डाल सकता है' जिस पर उसे संदेह है कि वह झूठ बोल रहा है या क्या वह नरम व विनम्र है? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं, जो हम इस अपील में स्वयं से पूछने के लिए मजबूर है, क्योंकि मामले की सुनवाई करने वाले न्यायाधीश ने कुछ गवाहों से सवाल किये।

2. विचारण की प्रतिकूल प्रणाली जो भी है, एक विचारण की अध्यक्षता करने वाले न्यायाधीश के लिए एक रेफरी या अंपायार की भूमिका ग्रहण करने और परीक्षण प्रक्रिया में प्रवेश करने वाले जुझारू और प्रतिस्पर्थी तत्वों से आने वाली अपरिहार्य विकृतियों के साथ अभियोजन पक्ष और बचाव पक्ष के बीच एक प्रतियोगिता में विकसित होने की अनुमति देने की एक दुर्भाग्यपूर्ण प्रवृत्ति है। यदि एक आपराधिक अदालत को न्याय प्रदान करने में एक प्रभावी साधन बनना है, तो पीठासीन न्यायाधीश को एक दर्शक और एक मात्र रिकॉर्डिंग मशीन नहीं होना चाहिए। उसे सच्चाई का पता लगाने के लिए गवाहों से सवाल पुछकर बुद्धिमान सक्रिय रूचि प्रदर्शित करके मुकदम में प्रतिभागी बनना चाहिए। जैसे कि हम में से एक को अतीत में कहने का अवसर मिला था :

'' प्रत्येक आपराधिक मुकदमा खोज की एक यात्रा है, जिसमें सत्य की खोज होती है। यह पीठासीन न्यायाधीश का कर्तव्य है कि वह सत्य की खोज करने और न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए उसके लिए खुले हर रास्ते का पता लागए। उस उद्देश्य के लिए उसे गवाहों से सवाल करने के अधिकार के साथ, साक्ष्य अधिनियम की धारा 165 द्व ारा स्पष्ट रूप से गवाहों से सवाल पूछने का अधिकार निहित है। वास्तव में एक न्यायाधीश को दिया गया अधिकार इतना व्यापक है कि वह किसी भी रूप में, किसी भी समय, किसी भी गवाह से या किसी भी तथ्य के बारे में पक्षकारों से प्रासंगिक या अप्रासंगिक कोई भी प्रश्न पूछ सकता है। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 172(2) में अदालत को किसी मामले

में पुलिस डायरी भेजने और मुकदमे में सहायता के लिए उनका उपयोग करने में समक्ष बनाती है। सुपुदर्गी करले वाले मजिस्ट्रेट की कार्यवाही के अभिलेख पर भी सत्र न्यायाधीश द्व ारा विचार किया जा सकता है। (सत्र न्यायाधीश, नेल्लोर बनाम इंथा रमण रेड्डी आई.एल.आर. 1972 ए.पी. 683:1972 सी.आर.आई.एल.जे. 1485)''

3. इस तरह की व्यापक शक्तियों के साथ, अदालत को सच्चाई को उजागर करने और कमजोरों और निर्दोष लोगों की रक्षा करने के लिए मकदमे में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए। निश्चित रूप से, उसे सवाल उठाने में अभियोजक की भूमिका नहीं निभानी चाहिए। वकील के कार्यों, विशेष रूप से लोक अभियोजनक के कार्यों को न्यायाधीश द्वारा अखाड़े में उतरकर हड़पने के लिए हीं है, जैसा कि था। न्यायाधीश द्वारा पूछे गये कोई भी प्रश्न ऐसे होने चाहिए कि वे गवाहों को डराने, विवश करने, भ्रकित करने या भयभीत करने वाले न हो। गवाहों के प्रति बहुत अधिक कठोर रवैया अपनाने वाले न्यायाधीश में निहित खतरे को लॉर्ड जस्टिस बर्केट द्वारा समझाया गया है :

अदालत की प्रक्रिया के अभ्यस्त लोग पीठासीन न्यायाधीश से लंबी पूछताछ की अग्नि परीक्षा के तहत भयभीत या भ्रमित या व्यथित होने की संभावना रखते हैं। इसके अलावा, जब पूछताछ एक व्यंग्यात्मक या विडंबनापूर्ण स्वर लेती है, जैसे कि यह कहने के लिए उपयुक्त है, या जब यह एक शत्रुतापूर्ण नोट लेता है, जैसे कि कभी–कभी लगभग अपरिहार्य होता है, तो खतरा केवल यह नहीं है कि गवाह अपनी इच्छा के अनुसार साक्ष्य पेश करने में असमर्थ होंगे, जैसा कि वे कर सकते है, बल्कि पक्षकारों को यह सोचना शुरू कर सकती हैं, यह बहुत गलत हो सकता है कि न्यायाधीश न्याय के तराजू को काफी हद तक नहीं पकड़ रहे हैं। नेशनल कोल बोर्ड,(1957)2 ऑल ईआर 155: (1957)2 डबलू.एल.आर.760) में लार्ड जस्टिस डेनिंग ने कहा :

इन सब में न्यायाधीश की भूमिका साक्ष्य को सुनाना है, केवल स्वयं गवाहों से प्रश्न पूछना है जब किसी ऐसे बिन्दु को स्पष्ट करना आवश्यक हो, जिसे अनदेखा किया गया हो या जिसे अस्पष्ट छोड़ दिया गया हो; यह देखना कि अधिवक्ता स्वयं स्पष्ट रूप से व्यवहार करते हैं और कानून द्वारा निर्धारित नियमों का पालन करते हैं, अप्रासंगिकताओं को बाहर करना और पुनरावृत्ति को हतोत्साहित करने के लिए; विवेकपूर्ण हस्तक्षेप द्वारा यह सुनिश्चित करना कि वह उन बिन्दुओं का पालन करता है, जो अधिवक्ता बना रहे हैं और उनके मूल्य का आकलन कर सकते हैं; और अंत में अपना मन बनाना कि सच्चाई कहॉ निहित है। यदि वह इससे आगे जाता है, तो वह न्यायाधीश का पद छोड़ देता है और एक अधिवक्ता की भूमिका ग्रहण करता है; और परिवर्तन उसे ठीक नहीं लगता है'' हम लॉर्ड डेनिंग से आगे जा सकते हैं और कह सकते हैं कि सत्य की खोज करना एक न्यायाधीश का कर्तव्य है और उस उद्देश्य के लिए वह '' किसी भी रूप में, किसी भी समय, किसी भी गवाह या पक्षकारों से, किसी भी तथ्य के बारे में, प्रासंगिक या अप्रासंगिक कोई भी प्रश्न पूछ सकता है'' (धारा165 साक्ष्य अधिनियम)। लेकिन, यह उसे लोक अभियोजक और बचाव पक्ष के वकील के कार्यों में अनुचित अतिक्रमण किये बिना, पक्षपात के किसी भी संकेत के बिना और गवाहों को डराये या धमकाने के बिना करना चाहिए। उसे अभियोजन और बचाव पक्ष को अपने साथ ले जाना चाहिए। अदालत, अभियोजन पक्ष और बचाव पक्ष को एक ऐसी टीम के रूप में काम करना चाहिए, जिसका लक्ष्य न्यायाधीश हो, एक ऐसी टीम जिसका कप्तान न्यायाधीश हो। न्यायाधीश को, '' एक गाना बजाने वालों के संचालक की तरह, व्यक्तित्व के बल पर अपनी टीम को सदभाव में काम करने के लिए प्रेरित करना चाहिए; कर्कश को वश में करें, डरपोक को प्रोत्साहित करें, युवा, चापलूसी और (पुराने) बूढ़े के साथ साजिश करें।''

15. बहस के दौरान, इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और निजी उत्तरदातागण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता से एक सवाल पूछा कि प्रदर्श–क5 पर दो तिथियॉ कैसी और क्यों है? याचिकाकर्ता की ओर से आर.टी.आई. प्रश्न के उत्तर के लिए संदर्भ दिया गया है, जो याचिका में प्रदर्श–क8 है, जो रिकॉड करता है कि एक्स–रे दिनांक 24.10.2015 किया गया और रिपोर्ट दिनांक 27.10.2015 को तैयार की गयी थी, लेकिन निजी उत्तरदातागण के विद्वान अधिवक्ता कोई स्पष्टीकारण नहीं दे सके कि प्रदर्श क5 पर दो तिथियॉ क्यों हैं।

16. कमी को भरना कुछ वाक्यांष है, जिसे हर बार संहिता की धारा 311 के तहत आवेदन किये जाने पर गढ़ा जा सकता है, लेकिन, क्या कमी दर्ज कर रहा है? मन्नान शेख और अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य (2014) 13 एस.सी. सी. 59 के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस उपबंध की व्याख्या इस प्रकार की है :

> '' 12. प्रत्येक न्यायालय का उद्देश्य सत्य की खोज करना है। संहिता की धारा 311 के कई ऐसे प्राविधानों में से एक है, जो कानून द्वारा स्वीकृत प्रक्रिया द्वारा सच्चाई को बाहर निकालने के प्रयास में अदालत के अंगों को मजबूत करती है। यह बहुत व्यापक रूप से संयोजित है। यह संहिता के तहत किसी भी जॉच, मुकदमे या अन्य कार्यवाही के किसी भी स्तर पर अदालत को किसी भी व्यक्ति को गवाह के रूप में बलाने या उपस्थिति में किसी भी व्यक्ति से पूछताछ करने का अधिकार देता है, हालॉकि गवाह के रूप में तलब नहीं किया गया है या पहले से ही जॉच किए गए गवाह को वापस बुलाता है और फिर से पूछताछ करता है। धारा के दूसरे भाग में ''होगा'' शब्द का उपयोग किया गया है। इसमें कहा गया है कि अदालत ऐसे किसी व्यक्ति को बुलाएगी और जॉच करेगी या वापस बुलाएगी या फिर से पूछताछ करेगी यदि उसका साक्ष्य मामले के न्यासंगत निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है। शब्द ''मामले के न्यायसंगत निर्णय के लिए आवश्यक'' मुख्य शब्द हैं। अदालत को यह राय बनानी चाहिए कि मामले के न्यायसंगत निर्णय के लिए गवाह को वापस बुलाना या फिर से परीक्षण करना आवश्यक है। चूँकि शक्ति व्यापक है, इसलिए इसका प्रयोग सावधानी से करना चाहिए। यह सामान्य चिर–परिचित है कि जितनी व्यापक शक्ति

होगी, उतनी ही अधिक जिम्मेदारी अदालतों पर होगी, जो इसका प्रयोग करते हैं। इस शक्ति का प्रयोग अनियंत्रित और मनमाना नहीं हो सकता है, लेकिन इसे केवल मामले के न्यायसंगत निर्णय पर पहुॅचने के उद्देश्य से निर्देशित किया जाना चाहिए। इससे अभियुक्त के प्रति पूर्वाग्रह /पक्षपात पैदा नहीं होना चाहिए। इसे अभियोजन पक्ष को कमी को भरने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। गवाह को वापस बुलाना किसी कमी को भरने के लिए है या यह किसी मामले के न्यायसंगत निर्णय के लिए है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। सभी मामलों में यह तर्क दिया जा सकता है कि अभियोजन पक्ष एक कमी को भरने की कोशिश कर रहा है, क्योंकि सीमांकन की रेखा पतली है। यह अदालत पर है कि वह सभी परिस्थितियों पर विचार करे और यह तय करे कि क्या वापस बुलाने की प्रार्थना वास्तविक है या नहीं''

17. वास्तव में, राजेन्द्र प्रसाद बनाम स्वापक औषधि प्रकोष्ठ के मामले में दिल्ली के प्रभारी अधिकारी मनु/ एस.सी./ 0397/ 1999 के माध्यम से माननीय उच्चतम न्यायालय ने आपराधिक विचारण में खामियों और त्रुटियों को भरने की अवधारणा पर विस्तार से चर्चा की और निम्नलिखित रूप से मत व्यक्त किया :–

''8. आपराधिक अदालतों में यह एक सामान्य अनुभव है कि जब भी अदालतें सहिता की धारा 311 के तहत या साक्ष्य अधिनियम की धारा 165 के तहत शक्तियों का प्रयोग करती हैं, तो बचाव पक्ष के वकील यह कहकर आपत्तियॉ उठाते हैं कि अदालत 'अभियोजन मामले में कमी को पूरा नहीं कर सकती।' **अभियोजन में एक कमी की तुलना मुकदमे के दौरान, लोक अभियोजक द्वारा किए गए निरीक्षण के परिणाम के साथ नहीं की जानी चाहिए, या तो प्रासंगिक सामग्री प्रस्तुत करने में या गवाहों से प्रासंगिक उत्तर प्राप्त करने में, कहावत 'गलती करना मानवीय है' गलतियॉ करने की संभावना की मान्यता है, जिसके लिए मनुष्यों का सिद्ध किया जाता है। किसी मामले के संचालन के दौरान इस तरह के किसी भी कूच या गलतियों का एक परिणाम को उस कमी के रूप में नहीं समझा जा सकता है, जिसे एक अदालत नहीं भर**

सकती है।

9. अभियोजन पक्ष में कमी को अभियोजन मामले के मैट्रिक्स में निहित कमजोरी या एक अव्यक्त दरार के रूप में समझा जाना चाहिए। इसका लाभ आम तौर पर मामले की सुनवाई में अभियुक्त को मिलना चाहिए, लेकिन अभियोजन पक्ष के प्रबंधन में अति दृष्टि को अपूर्णीय कमी के रूप में नहीं माना जा सकता है। परीक्षण में कोई भी पक्ष त्रुटियों को सुधारने से पहले बंद नहीं हो सकता है। यदि उचित साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था या किसी भी असावधानी के कारण प्रासंगिक सामग्री को रिकॉर्ड पर नहीं लाया गया था, तो अदालत को ऐसी गलतियों को सुधारने की अनुमति देने के लिए उदार होना चाहिए। आखिरकार, आपराधिक न्यायाधीश का कार्य आपराधिक न्याय का प्रशासन है न कि पक्षों द्वारा की गई त्रुटियों को गणना करना या यह पता लगाना और घोषित करना कि पक्षों में से किसने बेहतर प्रदर्शन किया।

10. वहीं निर्णय मोहनलाल शामजी सोनी बनाम भारत संघ (सुप्र) जिसमें कमी को भरने के विरूद्ध चेतावनी दी है, में भी इस प्रकार अनुपात निर्धारित किया हैः इसलिए यह स्पष्ट है कि आपराधिक न्यायालय के पास को किसी व्यक्ति को गवाह के रूप में बुलाने या किसी ऐसे व्यक्ति को वापस बुलाने और फिर से जॉच करने की पर्याप्त शक्ति है, भले ही दोनों पक्षों के साक्ष्य समाप्त हो और न्यायालय का अधिकार क्षेत्र स्पष्ट रूप से स्थिति की अनिवार्यता द्वारा निर्धारित की जाना चाहिए, और निष्पक्षता और सद्बुद्धि ही एक मात्र सुरक्षित मार्गदर्शक प्रतीत होता है और यह कि केवल न्याय की आवश्यकताएं ही किसी व्यक्ति की जॉच का आदेश देती हैं, जो प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करती है''

18. पी.डब्लू. 2 डॉ. बी.एस.दुग्ताल और पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा ने अपने बयानों में यह खुलासा किया कि ये दोनों अदालत को यह बताने में असमर्थ थे कि प्रदर्श–क 5, एक्स–रे रिपोर्ट पर दो तिथियॉ क्यों हैं। पी.डब्लू. 2 डॉ. बी.एस. दुग्ताल और पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा वे डॉक्टर हैं, जिन्होंने शुरू में दिनांक 23.10.2015 को पीड़ित की चिकित्सकीय जॉच की और एक्स–रे रिपोर्ट के आधार

पर एक पूरक चिकित्सा रिपोर्ट दी। जॉच के समय ये दोनों डॉक्टर अदालत के समक्ष बिना किसी मूल रिकॉर्ड के थे। उनके पास मेडिगो लीगल रजिस्टर नहीं था, जिसके आधार पर ऐसी मेडिकल रिपोर्ट दी गयी। जैसा कि कहा गया है, दुर्भाग्य से, अदालत ने हस्ताक्षेप नहीं किया, जब इन गवाहों के बयान दर्ज किये गये थे। अन्यथा, इस स्थिति को रोका जा सकता है और उन गवाहों को मूल अभिलेखों के साथ न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा जा सकता था, ताकि उन दस्तावेजों को स्पष्ट किया जा सकता था, जो उन्होंने जारी किये थे।

19. इसलिए, इस न्यायालय का विचार है कि एक्स–रे रिपोर्ट प्रदर्श–क5 को स्पष्ट करने के लिए पीड़ित से सम्बन्धित सभी मूल चिकित्सा दस्तावेजों, पी. डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा की आगे की जॉच, मामले के न्यायसंगत निर्णय के लिए आवश्यक है। तद्नुसार, याचिका स्वीकार करने योग्य है।

20. याचिका स्वीकार की जाती है। आक्षेपित आदेश/निर्णय अपास्त किये जाते हैं।

21. याचिकाकर्ता द्वारा संहिता की धारा 311 के तहत प्रस्तुत आवेदन स्वीकार किया जाता है।

22. पी.डब्लू. 3 डॉ. आर.के. वर्मा को अभियोजन पक्ष द्वारा उसकी पुनः परीक्षा के लिए बुलाया जाएगा। पुनः परीक्षा के बाद, निजी उत्तरदातागण द्वारा उसकी आगे प्रतिपरीक्षा की जाएगी। डॉ. आर.के. वर्मा सभी मूल चिकित्सा रजिस्टरों, अभिलेखों, एक्स–रे प्लेटों, पीड़ित से सम्बन्धित रजिस्टरों में प्रविष्टि के साथ न्यायालय में उपस्थित होगा।

23. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को निर्देश जारी किये जा सकते हैं कि विचारण में विलम्ब न करे और एक समय सीमा निर्धारित की जाए, ताकि मुकदमे का विचारण उस समय सीमा के भीतर समाप्त किया जा सके। याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और निजी उत्तरदातागण की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता इस न्यायालय को आश्वस्त करे कि मामला तय हो जाने तक वे किसी भी आधार पर स्थगन की मॉग नहीं करेगे।

24. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा किये गये कथनों के आलोक में, निम्न न्यायालय में मामले का विचारण प्रतिदिन के आधार पर किय जाए।

(रवीन्द्र मैठानी, जे.)

25.03.2022